Published in: Sablog. 8(5); 2016; 51-52.

वर्तमान समय का सच बयान वाया कविता

बिपिन तिवारी

कभी-कभी किसी शब्द की कोई एक व्याख्याएं उस शब्द के साथ इस तरह जुड़ जाती हैं कि उसके अतिरिक्त कोई अन्य व्याख्या उसका सही अर्थ नहीं दे पाती या दूसरा अर्थ उतना सहज ढंग से लिया नहीं जाता। साहित्य की व्याख्या कुछ इसी तरह से की गई है। 'साहित्य समाज का दर्पण है', यह वाक्य साहित्य के साथ एक रुढ़ि की तरह जुड़ गया है। अभी कुछ समय पहले तक जब कभी यह व्याख्या किसी से सुनने को मिलती तो उसकी छवि एक ऐसे पुराने खांचे के व्यक्ति की बनती, जो साहित्य को उन्हीं पुरानी द्विवेदीयुगीन व्याख्याओं तक सीमित करके देखता आ रहा है। आज समय बदल गया है, तो साहित्य की व्याख्या भी कुछ अलग ही बनेगी। आजादी के पहले से लेकर बाद के दौर तक में और आज भी साहित्य को व्याख्यायित करने की कोशिश होती रहती है। 'साहित्य मूलतः परकाया प्रवेश है', 'साहित्य समय की मुखर आवाज है' आदि ऐसी बहुत सी व्याख्याएं की गयी हैं लेकिन किसी एक व्याख्या पर उस तरह की सहमति नहीं बन पाई जिस तरह से 'साहित्य समाज का दर्पण है' पर बनी है। उसका कारण है कि यह व्याख्या आंदोलन के बीच से निकली थी और समाज के साथ गहरे से जुड़ी हुई थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इसे वर्तमान समय के संदर्भ में व्याख्यायित किया था। वर्तमान समय का साहित्य इस व्याख्या के साथ गहरे से जुड़ा हुआ दिखाई देता है। 16 मई 2014 के बाद राजनीति में जो बदलाव हुआ और उसका प्रभाव समाज पर भी पड़ा। इस बदलाव को साहित्यकार बखूबी दर्ज करता आ रहा है। वह चाहे लव जिहाद का मामला हो या एक खास कौम को केंद्र बनाकर उसके साथ सत्ता की सह पर किया गया बर्ताव या फिर किसानों की जमीन पर किसानों के हक को समाप्त करने वाला भूमि अधिग्रहण बिल। इक्कीसवीं शताब्दी का यह वह दौर है जब राजनीति को बहुसंख्यक समाज के हितों के हिसाब से संचालित किया जा रहा है। वह चाहे विचारों की बहुसंख्या हो या फिर धार्मिक बहुसंख्या। यदि किसी समूह, संगठन, व्यक्ति, में इस बहुसंख्या के खिलाफ विचार पैदा होते हैं तो वह आज की सत्ता की नजर में राष्ट्रद्रोही है। राष्ट्रद्रोही किसी को भी बहुत आसानी से सिद्ध किया जा रहा है। राष्ट्रद्रोही का अर्थ राष्ट्र के साथ द्रोह नहीं है अपितु सत्ता के विरोध को ही राष्ट्रद्रोह मान लिया गया है। ऐसे में नरेन्द्र दाभोलकर, गोविंद पनसारे, प्रो. कलबुर्गी, कन्हैया कुमार आदि राष्ट्रद्रोही हैं, जिसके लिए कुछ देशभक्त लोगों ने इन लोगों को सबक सिखाया है और मौका मिलने पर आज भी सबक सिखाते हैं। इनमें से अधिकांश लोगों को मार दिया गया है और कुछ को मारने के लिए इनाम राशि तय कर दी गई है। वर्तमान समय की कविता इन सभी के खिलाफ प्रतिवाद करती है। साहित्य केवल समाज की सच्चाइयों का ही बयान नहीं करता अपितु उस दौर की राजनीति के चरित्र की भी विवेचना करता है। आखिर वह कौन से कारण हैं कि आज अधिकांश व्यक्ति असहिष्णुता की बात कह रहे हैं? इतिहास के पन्नों को पलटें तो पता चलता है कि जो भी घटनाएं बीते कुछ महीनों में हुई हैं, वह नई नहीं हैं, परंतु जिस तरह से राज्य मशीनरी की तरफ से उनको संरक्षण दिया जा रहा है वह पहली बार हो रहा है। राज्य का दायित्व समाज के सभी वर्ग के लोगों के साथ समान व्यवहार करना है।

राज्य इस बात में भेद नहीं कर सकता कि जो व्यक्ति उससे असहमत हैं उनको सबक सिखाने के लिए मौत के घाट उतार दिया जाये। यहां इस लेख में इस दौर के साहित्यिक प्रतिरोध को काव्य के संदर्भ में व्याख्यायित करने का प्रयास रहेगा।

वर्तमान समय में विचारों की स्वतंत्रता को इस तरह सीमित किया जा रहा है कि कुछ भी कहने से पहले आपको इसके परिणाम की चिंता जरूर करनी चाहिए। यदि सत्ता द्वारा यह बताया जाए कि भारत का महान इतिहास रहा है, भारत की हिंदू संस्कृति दुनिया की महान संस्कृति है, तो उसको उसी रूप में स्वीकार करना है। यदि किसी समझदार कवि, लेखक, आलोचक, चिंतक ने इसके खिलाफ दलित, आदिवासी और अल्पसंख्यक समुदाय की बात कह दी तो उसे सबक सिखाया जायेगा। इसीलिए सबकुछ इतना नियंत्रित किया जा रहा है कि जिससे कोई भी विरोधी आवाज न उठ सके। कवि इस पूरे षंडयंत्र के खिलाफ अपनी आवाज कविता में उठाता है। कविता का इतिहास इस बात का गवाह रहा है कि वह व्यवस्था के खिलाफ रही है। आज के यथार्थ के संबंध में कवि मंगलेश डबराल 'यथार्थ इन दिनों' में बिना किसी डर के कहते हैं-'एक मरा हुआ मनुष्य इस समय/जीवित मनुष्य की तुलना में कहीं ज्यादा कह रहा है/उसके शरीर से बहता हुआ रक्त।/शरीर के भीतर दौड़ते हुए रक्त से कहीं ज्यादा आवाज कर रहा है...एक लुटेरा एक हत्यारा एक दलाल/आसमानों पहाड़ों मैदानों को लांघता हुआ आ रहा है/उसके हाथ धरती के मर्म को दबोचने के लिए बढ़ रहे हैं।' और कवि मनमोहन इस समय की राजनीतिक व्यवस्था द्वारा सच को दबाने का जो घृणित काम किया जा रहा है, उसके खिलाफ कहते हैं-'सवाल उठने का सवाल ही नहीं/सवाल का उठना बर्खास्त/सवाल उठाने वाला बरखास्त, यानी सवाल बरखास्त/असहमति कोई है तो असहमति बरखास्त/असहमत बरखास्त/और फिर सभा बरखास्त/जनता का डर/तो पूरी जनता बरखास्त।' आज के दौर में जो भी असहमत होगा उसे उसकी कीमत चुकानी पड़ेगी। आज देशभक्त होने का अर्थ यह नहीं है कि आप देश की प्रगति के लिए क्या कर रहे हैं?, कितने घंटे काम कर रहे हैं?, देशभक्त होने का अर्थ है कि आप उनकी बातों से सहमत हो रहे हैं या नहीं। यदि आप विरोधी विचार रखते हैं तो आप किसी भी समय देशद्रोही, आतंकी, नक्सली और इसके बाद विरोधी पार्टी के पैसे पर काम करने वाले 'ट्टू' साबित किए जा सकते हैं। इसके बावजूद कवि सच कहने का जोखिम लेता है। 'तुम वंशज हो किनके देखो/नाजी-पाजी को भी देखो/जालिम कातिल को भी देखो/जो मार-काट के आदी हैं/तुम वंशज हो उनके, देखो/हम बोलेंगे तुम जुल्मी हो/हम बोलेंगे तुम झूठे हो/कहते हो कुछ, करते हो कुछ/नकली-असली के सभी भेद/हम खोलेंगे, हां! खोलेंगे/हम बोलेंगे, लब खोलेंगे।' (रवि भूषण: हम बोलेंगे,लब खोलेंगे) इन्हीं कारणों से साहित्य के साथ राजनीति का रिश्ता विपरीत ध्रुव का होता है।

वर्तमान सरकार केवल नए तरह का इतिहास ही नहीं लिखवा रही है अपितु जिस तरह से सबूतों से छेड़छाड़ कर रही है उससे पता चलता कि वह अपने अतीत को मिटाने के लिए कितना व्याकुल है। वह गांधी की हत्या के दस्तावेजों को, अंग्रेजों को लिखे गये माफीनामे वाले पत्रों को मिटा देना चाहती है, जिससे उन नायकों को नए तरह से प्रस्तुत किया जा सके। कविता इसका प्रतिपक्ष रचती है-'वे गांधी की हत्या पर पर्दा नहीं डाल सकते/तो अब मिटा रहे हंै हत्या के

सबूत...' (रंजीत वर्मा: इस तरह कितने दिन बच पायेगा लोकतंत्र) ठीक ऐसे ही कविता समाज की उन सभी समस्याओं को लेकर प्रश्न कर रही है जो आज के सबसे बड़े प्रश्न हैं। वह चाहे अल्पसंख्यक समुदाय के खिलाफ हिंसा का पूरा माहौल तैयार करना हो या फिर वर्तमान सरकार की सच्चाइयों को उजागर करने वालों के खिलाफ कोई ठोस कार्रवाई करना। आज मुजफ्फरनगर से लेकर दादरी तक में न जाने कितने मुस्लिमों को सांप्रदायिकता की आग में झोंक दिया गया है। इन सभी की गलती इतनी थी कि यह मुस्लिम थे। आज की तारीख में मुस्लिम होना अपने आप ही देशद्रोही हो जाना है। यदि कुछ मुस्लिम देश विरोधी गतिविधियों में शामिल हैं तो उन साध्वियों और प्रचारकों को क्या कहोगे जिन्होंने मालेगांव विस्फोट का पूरा षडयंत्र रचा था। कविता इन सभी को लेकर प्रश्न खड़े करती है। अखलाक को इसलिए घर से घसीटकर मार दिया गया कि उसके घर के फ्रिज में मांस रखा हुआ था। समाज में एक तरफ हत्याएं की जा रही हैं तो दूसरी तरफ उनका घर-वापसी के नाम पर धर्मांतरण कराया जा रहा है। सवाल यहां उठता है कि क्या धर्मांतरण से उनके दैनिक जीवन की समस्याएं हल हो जायेंगी? क्या उनके बच्चों की जिंदगी बेहतर हो जायेगी? यदि नहीं तो उनके साथ क्यों यह क्रूर मजाक किया जा रहा है? सत्ता जब इस तरह से लोगों को अपने हिसाब से जीने का रोडमैप तैयार करने लगती है, तो इससे उसकी मंशा को समझा जा सकता है। आज सत्ता जिस तरह से सवाल उठाने वाले लोगों को, उनके खिलाफ विचार रखने वाले लोगों को प्रताड़ित कर रही है, उससे साहित्य की शक्ति और बढ़ती है। जनता साहित्य के माध्यम से रास्ता तलाशती है और मुक्ति के लिए संघर्ष करती है। आज वर्तमान व्यवस्था के खिलाफ भारत ही नहीं भारत के बाहर भी माहौल बन रहा है। साहित्य बड़े से बड़े तानाशाह के सामने भी अपनी आवाज को बुलंद रखता है, भले ही उसकी कितनी भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। यही साहित्य की पक्षधरता है और यही साहित्य का उद्देश्य भी। कविता प्रतिरोध रचती है-'साहिब तुमको तख्त मुबारक, ताज मुबारक।/नया-नया ये राज मुबारक।/अपने सीने से चिपकाए मुल्क खड़े हैं।/नहीं तुम्हारा होने देंगे, ढीठ बड़े हैं।...'(सौरभ बाजपेयी: मुल्क)

बिपिन तिवारी, हिंदी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय, गोवा-403206, मो. 913057012